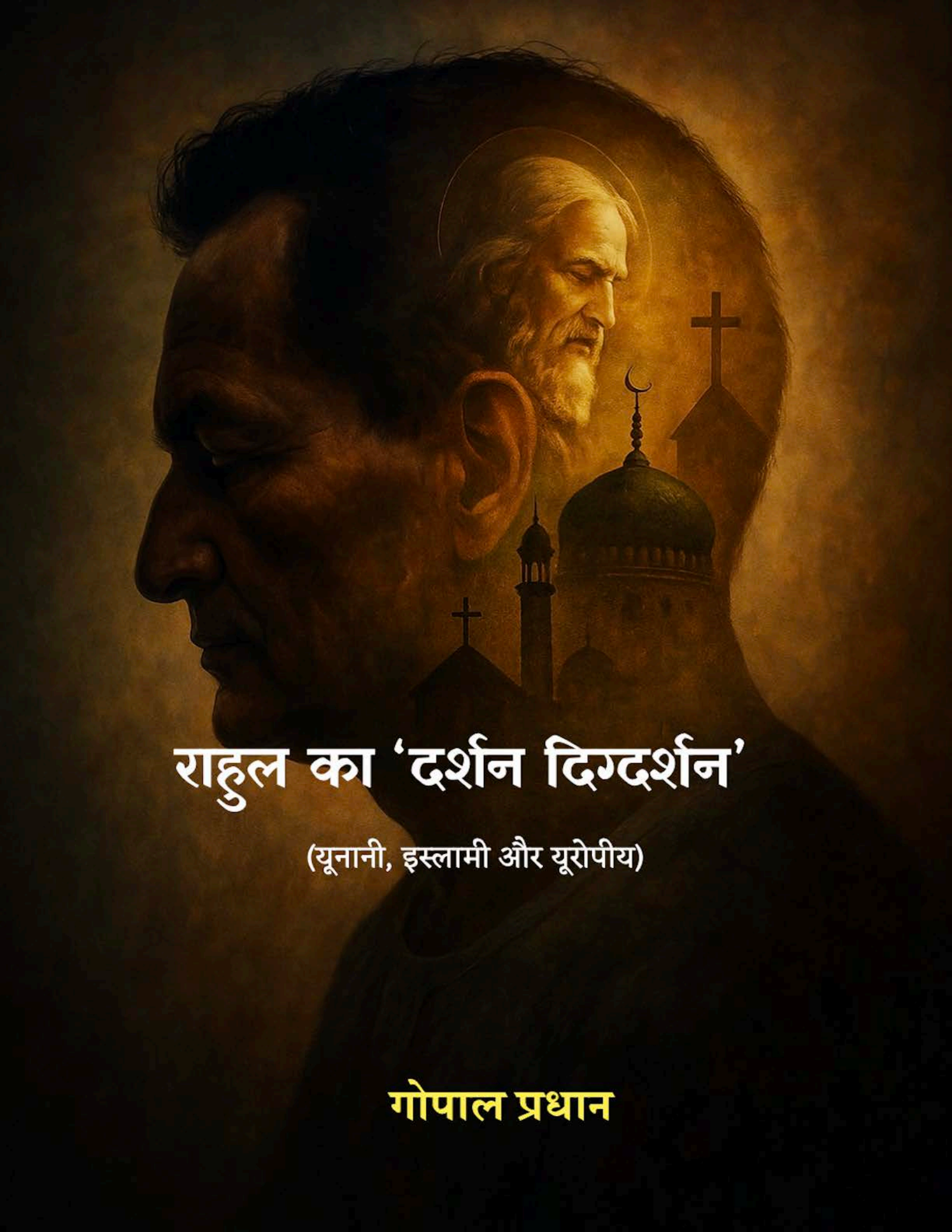

राहुल का 'दर्शन दिग्दर्शन'

(यूनानी, इस्लामी और यूरोपीय)

गोपाल प्रधान

राहुल का ‘दर्शन दिग्दर्शन’

(यूनानी, इस्लामी और यूरोपीय)

गोपाल प्रधान

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: अक्टूबर, 2025

© गोपाल प्रधान

विषय सूची

भूमिका	3
‘दर्शन दिग्दर्शन’ में दर्शन का विकास	6
राहुल की नजर में यूरोपीय दर्शन	23
दर्शन में इस्लाम बरास्ते राहुल	43

भूमिका

राहुल सांकृत्यायन की इस किताब को बहुत पहले पढ़ने का अवसर मिला था। तब यूनानी दार्शनिक हेराक्लिटस के चिंतन ने आकर्षित किया था। दर्शन में जीवन भर चलने वाली रुचि पैदा करने में इस किताब का निर्णायक योगदान रहा है। संयोग से जब राजनीतिक जुड़ाव हुआ तो उसमें भी इसी रुचि के लोगों का संसर्ग हासिल हुआ। कभी कभी अतिरिक्त आत्मविश्वास के कारण भद्दी भूलें भी हुईं। दोस्त सज्जन थे इसलिए इशारा करते। कुछ इशारे और कुछ अपनी समझ से इन्हें दुरुस्त भी करता रहा। ऐसा निजी के साथ सार्वजनिक तौर पर भी होता रहा। शुक्र था कि इसका मौका भी खूब मिलता रहा।

इसी वजह से अंग्रेजी में हाथ तंग होने की ग्रंथि नहीं विकसित हुई। जब हिंदी साहित्य का अध्यापन करने का मौका आया तो गाहे बगाहे इस क्षेत्र में भी हाथ आजमाता रहा। एकाध जगहों पर अध्यापन हेतु साक्षात्कार में जब पसंद का पाठ्यक्रम प्रस्तुत करने को कहा गया तो इससे जुड़े प्रस्ताव ही रखे। फिर हिंदी के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के लिए ऐच्छिक प्रश्न पत्र बनाना था तो इसे पढ़ाने वाली पुस्तकों में शामिल किया। अध्यापन हेतु पढ़ने के क्रम में यह किताब और भी खुलती गयी।

अध्यापन के साथ जब प्रकाशन की अनिवार्यता जुड़ी तो इसी तरह की तमाम सामग्री छापने के लिए जगह जगह भेजता रहा। संयोग से दोस्त इसे छापते भी रहे। आखिरी लेख अप्रकाशित है। सबसे पहला लेख इस किताब में व्यक्त दर्शन के विकास को उजागर करने की प्रक्रिया में लिखा गया। भारतीय ज्ञान परम्परा का हालिया जोश पैदा होने पर बहाने से इस किताब को सामने लाना और उस पर बात करना पसंद आया। इसी सिलसिले में संपादित एक किताब में उस लेख को जगह मिली।

दूसरा लेख भी इसी तरह बहाना निकालकर तैयार किया गया। संयोग से दिनकर के 'संस्कृति के चार अध्याय' में भी इस्लाम पर पूरा अध्याय होने से गुंजाइश बन गयी। पाठ्यक्रमों से इस्लाम का जिक्र गायब करने की उस समय की मुहिम का प्रतिरोध करने के लिए ऐसा करना उचित लगा। हिंदी साहित्य में भी सूफ़ी साहित्य का प्रसंग इसका अवसर मुहैया कराता है। इस मामले में राहुल का विवेचन आज भी बेजोड़ लगता है। आम तौर पर इस्लाम की छवि कट्टर धर्म की बना दी गयी है। ऐसे में उसमें दर्शन की समृद्ध परम्परा को सामने लाना सही महसूस हुआ। यह भी एक संपादित किताब में शामिल हुआ।

अगर इस परिचायिका से राहुल सांकृत्यायन की मूल पुस्तक को पढ़ने में थोड़ी भी आसानी हुई तो लिखना सार्थक महसूस होगा। जिस तरह राहुल ने दर्शन की चीनी

और जापानी परम्परा को छोड़ देने के लिए क्षमा मांगी है उसी तरह उनकी किताब के भारतीय दर्शन को विस्तार से न रखने के लिए क्षमाप्रार्थी हूं। किसी न किसी सिलसिले में उसका जिक्र संक्षेप में आया है। फिलहाल उतने से ही काम चलाने की गुजारिश है।